8

# युगीन शैक्षिक चिन्तन के पुरोधा : आचार्य महाप्रज्ञ

डॉ. गिरधारीलाल शर्मा*

**आलेख–सार**

आचार्यश्री महाप्रज्ञ का शैक्षिक चिन्तन एक युगीन अवदान है। आचार्य महाप्रज्ञ ने शैक्षणिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक क्षेत्रों में नये कीर्तिमान स्थापित किये हैं। आचार्यश्री ने प्रत्येक शैक्षिक मूल्य पर विस्तृत प्रकाश डाला जैसे शिक्षा का सम्प्रत्यय, गुरु–शिष्य सम्बन्ध, संयम, ब्रह्मचर्य, नैतिकता आदि तथा शिक्षा के नये आयाम के रूप में 'जीवन विज्ञान' जैसा अवदान विश्व को दिया। वर्तमान शिक्षा आत्मानुशासन, चरित्र निर्माण तथा संयम जैसे अपरिहार्य मूल्यों का विकास जीवन विज्ञान की शिक्षा के बिना संभव नहीं है। आचार्य महाप्रज्ञ ने आहार, वाणी व इन्द्रिय संयम से सफल प्रयोग किये। प्रेक्षाध्यान व अहिंसा प्रशिक्षण उनका इस दिशा में विशेष अवदान है। अतः आज विद्यालयों, महाविद्यालयों व विश्वविद्यालयों में प्रेक्षाध्यान व अहिंसा प्रशिक्षण को पाठ्यक्रम में अनिवार्य रूप से शामिल किया जाना चाहिए।

**प्रस्तावना**

अणुव्रत अनुशास्ता युगप्रधान आचार्यश्री महाप्रज्ञ एक ऐसे कालजयी व्यक्तित्व का नाम है जिनके बहुआयामी व्यक्तित्व ने शैक्षणिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक क्षेत्रों में नये कीर्तिमान स्थापित किये हैं। उन्होंने अपने गहन ज्ञान, दूरदर्शी दृष्टि एवं प्रज्ञा से सम्पूर्ण विश्व को आलोकित व प्रभावित किया। मानवता के क्षेत्र में उनके अनगिनत एवं उल्लेखनीय सेवाओं एवं अवदानों के संदर्भ में उन्हें 'युगप्रधान' पद से अभिसिक्त किया गया। आचार्य महाप्रज्ञ का अहिंसा, नैतिकता, शांति, सामाजिक–धार्मिक सौहार्द, आध्यात्मिकता, जीवन विज्ञान, प्रेक्षाध्यान एवं

* सहायक आचार्य, शिक्षा विभाग, जैन विश्व भारती संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय), लाडनूं–341306 (राजस्थान)

पर्यावरण आदि विषयों पर मौलिक चिन्तन बुद्धिजीवियों व जनसाधारण दोनों के लिए अभिप्रेरक है।

**मुख्य विषयवस्तु**

आचार्य महाप्रज्ञ के शैक्षिक चिन्तन को सम्बलित प्रमुख बिन्दु निम्नानुसार हैं–

1. **शिक्षा–** शिक्षा संस्कार निर्माण की प्रक्रिया है। जीवन को संस्कारित या सुसंस्कृत बनाने में शिक्षा की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका है। शिक्षा के अर्थ में जैन साहित्य में 'सम्यग्ज्ञान' शब्द का प्रयोग हुआ है जिसका अर्थ है जीवादि तत्त्वों का यथार्थ व सही ज्ञान। आचार्य उमास्वाति के शब्दों में,

**'सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः।'**[1]

आचार्य महाप्रज्ञ ने शिक्षा को शारीरिक विकास, मानसिक विकास, बौद्धिक विकास तथा भावनात्मक विकास की प्रक्रिया माना है। वर्तमान प्रचलित शिक्षा के संदर्भ में उनका मानना था कि 'वर्तमान शिक्षा जानकारी तो दे रही है किन्तु संस्कार नहीं।'[2] अर्थात् विद्यार्थी का ज्ञानात्मक व बौद्धिक विकास तो हो रहा है किन्तु मानसिक व भावात्मक विकास पिछड़ता जा रहा है। जिसके परिणाम विकृत व्यक्तित्व के रूप में दिखाई दे रहे हैं। महाप्रज्ञ जी के अनुसार, 'शिक्षा का अवमूल्यन हुआ है।'[3] अर्थात् शिक्षा के क्षेत्र में मूल्यों में निरन्तर गिरावट आई है। जिससे वर्तमान में विद्यार्थियों में अनुशासनहीनता, हिंसक प्रवृत्ति, स्वार्थवृत्ति, वासना, बड़ों की अवज्ञा व निरादर जैसे दुर्गुणों का विकास हुआ है जो न केवल उनके स्वयं के लिए बल्कि समाज के लिए भी हानिकारक सिद्ध हो रहा है।

2. **गुरु–शिष्य सम्बन्ध**

जैन विचारधारा में मुक्ति या मोक्ष मार्ग के साधनस्वरूप तीन तत्त्वों–देव, गुरु व शास्त्र को प्रमुख माना गया है। गुरु ही देव व धर्म का बोध कराते हैं जिससे साधक मुक्ति मार्ग पर सफलता से अग्रसर होता है। कहा गया है–

**अरिहन्तो मह देवो, जावज्जीवं सुसाहुणो गुरुणो,**
**जिणपण्णत्तं तत्तं, इअ सम्मत्तं मए गहियं।**[4]

गुरु शिष्य सम्बन्ध कैसे हों? इसका प्रत्यक्ष उदाहरण आचार्य महाप्रज्ञ ने अपने गुरु आचार्यश्री तुलसी के प्रति गुरुभक्ति से दुनिया के

समक्ष रखा। वे अपने गुरु के प्रति सर्वात्मना समर्पित थे। आचार्य महाप्रज्ञ के अनुसार, गुरु के प्रति पूर्ण समर्पण व सच्ची श्रद्धा ही जीवन में सफलता के मूल मंत्र हैं। वर्तमान शिक्षा में शिक्षक–शिक्षार्थी सम्बन्धों में विकृति आई है, सम्बन्धों में घनिष्ठता कम हुई है। इसके कारण जो भी रहे हैं किन्तु परिणाम वैयक्तिक व सामाजिक स्तर पर अत्यन्त नकारात्मक आ रहे हैं। आचार्य महाप्रज्ञ की गुरु भक्ति इस दिशा में मार्ग प्रशस्त करने हेतु श्रेष्ठ उपाय है।

### 3. अनुशासन

जीवन में सभी प्रवृत्तियों के सुसंचालन के लिए अनुशासन का यथावत निर्वहन अनिवार्य है। अनुशासन के अभाव में देश, समाज, परिवार तथा व्यक्ति का जीवन छिन्न–भिन्न हो सकता है। जैन विचारधारा में 'आत्मानुशासन' पर बल दिया गया है। अनुशासन तथा शिक्षा दोनों को समानार्थक माना है। यथा–

**'अणुसासिओ न कुपेज्जा।'[5]**

आचार्य महाप्रज्ञ कहते हैं कि अपने आप पर शासन करना ही अनुशासन है। उन्होंने गुरुदेव आचार्यश्री तुलसी कथित वाक्य 'निज पर शासन फिर अनुशासन' के संदेश को चहुंओर फैलाया तथा स्वयं आत्मसात किया। वे कहते थे कि जो व्यक्ति अपने मन, शरीर, वाणी तथा इन्द्रियों पर संयम करता है, वही अपने पर शासन करता है तथा सुखी व सफल जीवन व्यतीत करता है।

आज हम देखते हैं व्यक्ति, परिवार, समाज तथा देश में अनुशासनहीनता चिन्तनीय स्तर पर पहुंच रही हैं। विद्वेष, पारिवारिक कलह, आपसी झगड़े, बलात्कार जैसी गंभीर समस्याएं चहुंओर दिखाई देती हैं। शिक्षा के मंदिर अनुशासन का पाठ पढ़ाने में पूरी तरह असफल प्रतीत हो रहे हैं। अतः आज आवश्यकता है महाप्रज्ञ के चिन्तन को आत्मसात करने की। विद्यालय वातावरण, शिक्षकों का आदर्श जीवन, पारिवारिक वातावरण आदि के माध्यम से बच्चों को आत्मानुशासन की ओर प्रेरित किया जा सकता है। महाप्रज्ञ के अनुसार, 'शिक्षा के माध्यम से मानसिक व बौद्धिक विकास तो होता है, पर अनुशासन का विकास नहीं होता क्योंकि अनुशासन आता है बुद्धि से परे तथा शिक्षा रह जाती है बुद्धि की सीमा में ही।'[6]



आत्मानुशासन का मूल्य सर्वोपरि है जो ध्यान के अभ्यास से आता है तथा इसके लिए आचार्य महाप्रज्ञ ने प्रेक्षाध्यान के अभ्यास पर बल दिया।

### 4. संयम

शिक्षा का मुख्य आधार है– संयम। बिना संयमित जीवन के शिक्षा की उपलब्धि संभव नहीं।

जैन दर्शन में कहा गया है– **'संयमः खलु जीवनम्'** संयम ही जीवन है। इसी प्रकार "धम्मो मंगलमुक्किठं, अहिंसा संजमो तवो"[7] अर्थात् धर्म उत्कृष्ट मंगल है। अहिंसा, संयम व तप इसके लक्षण हैं। संयम को धर्म का प्रमुख लक्षण माना गया है।

आचार्य महाप्रज्ञ शिक्षक तथा शिक्षार्थियों को मुख्यतः आहार संयम, वाणी संयम तथा इन्द्रिय संयम के अभ्यास पर बल देते हैं।

विद्यार्थियों/युवाओं में नशीले व मादक पदार्थों की बढ़ती प्रवृत्ति, क्रोध की बढ़ती प्रवृत्ति तथा काम–वासना के वशीभूत होकर बलात्कार जैसी घटनाओं का बढ़ना क्रमशः आहार, वाणी व इन्द्रियों पर अनियंत्रण का ही परिणाम है जिससे व्यक्ति का स्वयं का पतन तो हुआ ही है, समाज व राष्ट्र का भी पतन हुआ है। हम विद्यालयी व पारिवारिक स्तर पर इन समस्याओं का समाधान नहीं खोज रहे हैं; किन्तु आचार्य महाप्रज्ञ ने आहार, वाणी व इन्द्रिय संयम से सफल प्रयोग किये। प्रेक्षाध्यान व अहिंसा प्रशिक्षण उनका इस दिशा में विशेष अवदान है। अतः आज विद्यालयों, महाविद्यालयों व विश्वविद्यालयों में प्रेक्षाध्यान व अहिंसा प्रशिक्षण को पाठ्यक्रम में अनिवार्य रूप से शामिल किया जाना चाहिए।

### 5. ब्रह्मचर्य

सभी भारतीय दर्शनों में ब्रह्मचर्य को श्रेष्ठ जीवन मूल्य में स्थान दिया गया है। सामान्यतः ब्रह्मचर्य से अभिप्रायः ऐन्द्रिय कामनाओं विशेषकर काम प्रवृत्ति के नियंत्रण से लगाया जाता है। जैन आगमों में कहा गया है–

**सद्दे रूवे च गंधे च रसे काले तथैव च**
**पंच विहे कामगुणे निच्चयो परिवज्जए।[8]**

अर्थात् यह केवल संभोग से विरति न होकर पांचों इन्द्रियों (श्रवण, स्वाद, दृष्टि, गंध व स्पर्श) की संतुष्टि के प्रति उदासीनता है।

आज हमारे विद्यार्थी/युवा पश्चिम के 'मुक्तभोग' की ओर आकर्षित होकर न केवल अपना भविष्य बर्बाद कर रहे हैं बल्कि समाज व राष्ट्र के विकास में बाधक बन रहे हैं।

आचार्यश्री महाप्रज्ञ ने युवाओं में बढ़ती कामुकता का गहराई से अध्ययन किया तथा इस समस्या से मुक्ति के सफल प्रयोग किये। इस दिशा में उनकी पुस्तक 'मुक्त भोग की समस्या व ब्रह्मचर्य' में उन्होंने मुक्त भोग के दुष्परिणाम, ब्रह्मचर्य साधना के लाभ तथा ब्रह्मचर्य को साधने के उपायों पर विस्तृत व सहज विश्लेषण प्रस्तुत किया है। महाप्रज्ञ लिखते हैं– 'मन तथा इन्द्रिय संयम ही ब्रह्मचर्य है'[3] तथा ब्रह्मचर्य साधना इन दोनों पर नियंत्रण से ही संभव है। नियंत्रण दो प्रकार से हो सकता है– दमन व उदात्तीकरण। दमन में व्यक्ति वृत्ति को जबरदस्ती रोकता है, जिसमें वे हार्मोन्स कम स्रावित होते हैं जो उत्तेजक होते हैं। साधना तथा चैतन्य केन्द्रों का ध्यान इसमें बहुत सहयोगी बनता है। आचार्य महाप्रज्ञ ने प्रेक्षाध्यान के नियमित प्रयोगों के माध्यम से ब्रह्मचर्य की सफल साधना की। वे कहते हैं कि ब्रह्मचारी में धैर्य, आत्मविश्वास व मनोबल की प्रधानता होती है जिससे जीवन के हर क्षेत्र में वह सफलता प्राप्त करता है। आज हमारे विद्यार्थियों को, युवाओं को ब्रह्मचर्य साधना की सर्वाधिक आवश्यकता है जिसमें आचार्य महाप्रज्ञ के प्रयोग अत्यधिक सहायक हो सकते हैं।

### 6. नैतिकता

नैतिकता वह मूल्य है जिसकी उपस्थिति में सभ्य समाज का निर्माण होता है। नैतिकता से तात्पर्य उचित–अनुचित, सही–गलत, करणीय– अकरणीय का भान होने से है। जैनदर्शन के आधार पर नैतिकता का मानदण्ड है–संयम। संयम आत्माभिमुखी भी है और समाजाभिमुखी भी।[4] समाज में आज बढ़ते भ्रष्टाचार, व्यभिचार, दैनन्दिनता, प्रतिद्वन्द्विता आदि का कारण व्यक्ति का अनैतिक होना है। विद्यार्थी अनैतिक साधनों से परीक्षा पास कर नौकरी प्राप्त कर रहे हैं। जिसमें उन्हें कुछ शिक्षक व प्रशासन भी सहयोग कर रहे हैं तथा प्रतिभा पलायन जैसी समस्या पैदा हो रही है।

आचार्य महाप्रज्ञ ने नैतिकता के मूल्यों के विकास हेतु कुछ चिन्तन किया जो उनकी पुस्तक 'नैतिकता, दृष्टि व अणुव्रत' से बहुत दृष्टिगोचर होता है। वे कहते हैं– 'जहां इच्छा परिमाण तथा संयमित



संयम की चेतना जाग्रत होती है, वहां नैतिकता के संस्कार–बीजों के प्रस्फुटन, अंकुरण व पल्लवन की संभावना की जा सकती है।'[5] अपने हित के लिए, अपनी शांति के लिए स्वार्थ व भोग का संयम कीजिए, नैतिकता का विकास अपने आप होगा–

**सुधरे व्यक्ति समाज व्यक्ति से, उसका असर राष्ट्र पर हो।**
**जाग उठे जन–जन का मानस, ऐसी जागृति घरघर हो।।**

आचार्य महाप्रज्ञ के अनुसार, 'इच्छा के शोधन व परिष्कार का महत्वपूर्ण सूत्र है–अनुप्रेक्षा। उन्होंने नैतिकता के विकास हेतु अनुप्रेक्षा के सफल प्रयोग किये। अनैतिकता के बीज चंचलता में निहित होते हैं तथा मन की चंचलता को रोकने में ध्यान का विशेष महत्व है जो कि प्रायोगिक पूट है।

वैसे तो अनैतिकता से समाज का प्रत्येक क्षेत्र ग्रस्त है किन्तु शिक्षा जैसा पवित्र क्षेत्र आज अनैतिकता का पर्याय बनता जा रहा है। शिक्षण संस्थानों में प्रवेश, मूल्यांकन, शिक्षक नियुक्ति व पदस्थापन आदि प्रत्येक जगह अनैतिक साधनों का उपयोग स्वार्थ सिद्धि हेतु किया जा रहा है जिससे अयोग्य व्यक्ति आगे बढ़ रहे हैं तथा योग्य पीछे रह जाते हैं जिसका प्रत्यक्ष नकारात्मक प्रभाव समाज व राष्ट्र के विकास पर पड़ रहा है। ऐसी स्थिति में आचार्य महाप्रज्ञ का चिन्तन, उनके सूत्र व प्रयोग विद्यार्थी, शिक्षक व प्रशासक वर्ग में नैतिकता के विकास में अत्यन्त सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

### 7. जीवन विज्ञान

पिछले कुछ दशकों से निरन्तर हमने शिक्षा के क्षेत्र में नित नए आयाम स्थापित किये हैं। आज हमारी शिक्षा अच्छे डॉक्टर, इंजीनियर, अच्छे शिक्षक, अच्छे वकील तैयार कर रही है। इस दृष्टि से वर्तमान शिक्षा को दोषपूर्ण कहना अनुचित होगा किन्तु जब एक डॉक्टर मानव अंगों की चीरफाड़ करता है, इंजीनियर शिक्षण लेकर मिलावटी सामान उपयोग करता है, शिक्षक विद्यार्थियों को स्कूल में ठीक से नहीं पढ़ाकर ट्यूशन हेतु बाध्य करता है, वकील शिक्षण लेकर दोषी को निर्दोष साबित करता है तो क्या ये शिक्षा की सफलता है?

आचार्य महाप्रज्ञ कहते हैं–इसका कारण हमारी शिक्षा प्रणाली का एकांगी होना है। हम शारीरिक व बौद्धिक विकास पर तो ध्यान दे रहे

हैं लेकिन मानसिक व भावनात्मक विकास पिछड़ गया है। इसके साथ ही हमारी शिक्षा अनुशासन, चरित्र विकास व संयम जैसे मूल्यों का विकास करने में भी नाकाम रही है।

शिक्षा प्रणाली की इस अपूर्णता पर सूक्ष्म चिन्तन कर आचार्य महाप्रज्ञ ने 'जीवन विज्ञान' का विशिष्ट अवदान शिक्षा जगत् को दिया। जीवन विज्ञान की परिकल्पना यही है कि शिक्षा प्रणाली संतुलित हो। संतुलित का अभिप्रायः है शारीरिक व बौद्धिक विकास के साथ-साथ मानसिक व भावात्मक विकास। 'संतुलन को प्रस्थापित करने वाले चार तथ्य हैं– प्राणधारा का संतुलन, जैविक संतुलन की स्थापना, क्षमता की आस्था का जागरण तथा दृष्टिकोण, व्यवहार व भावना का परिष्कार।[12]

वर्तमान शिक्षा आत्मानुशासन, चरित्र निर्माण तथा संयम जैसे अपरिहार्य मूल्यों का विकास जीवन विज्ञान की शिक्षा के बिना संभव नहीं है। अतः सुखी व सफल जीवन हेतु व्यक्ति को अपनी विश्वविद्यालयी शिक्षा उपरान्त एक वर्ष जीवन विज्ञान की शिक्षा हेतु देना चाहिए, बल्कि विद्यालयी स्तर से ही जीवन विज्ञान की शिक्षा का प्रारंभ हो जाना चाहिए।

जीवन विज्ञान में योग, कर्मशास्त्र और धर्मशास्त्र तीनों का प्रशिक्षण जुड़ा हुआ है। शरीर, श्वास, वाणी तथा मन को प्रशिक्षित करना, प्रेक्षाध्यान की महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है तथा इस प्रक्रिया के चार तत्त्व हैं–प्रेक्षा, अनुप्रेक्षा, कायोत्सर्ग तथा जागरूकता। जो व्यक्ति इन चारों को साध लेता है, वह जीवन का आनन्द लेने में सक्षम हो जाता है। इसके लिए शिक्षालयों में नियमित शिविरों का आयोजन किया जाना चाहिए। जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं इस दिशा में सतत प्रयत्नशील है।

## निष्कर्ष

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि आचार्य महाप्रज्ञ का शैक्षिक चिन्तन एक युगीन अवदान है। उन्होंने तत्कालीन शिक्षा का सूक्ष्मता से अध्ययन किया तथा उन अवकाशों को खोजा जो उसकी अपूर्णता के कारण थे।

आचार्यश्री ने प्रत्येक शैक्षिक मूल्य पर विस्तृत प्रकाश डाला, जैसे शिक्षा का सम्प्रत्यय, गुरु–शिष्य सम्बन्ध, संयम, ब्रह्मचर्य, नैतिकता आदि तथा शिक्षा के नये आयाम के रूप में 'जीवन विज्ञान' जैसा अवदान विश्व को दिया।



आज विभिन्न शैक्षिक समस्याओं जैसे– अनुशासनहीनता, कर्त्तव्यहीनता, गुरु–शिष्य सम्बन्धों में विकृति, विद्यार्थियों में बढ़ती कामुकता व नशे की प्रवृत्ति, बड़ों का अनादर तथा शिक्षा में बढ़ती अनैतिकता आदि के समाधान में आचार्यश्री की दृष्टि मील का पत्थर साबित हो सकती है।

शिक्षालयों में जीवन विज्ञान, प्रेक्षाध्यान को यदि प्राथमिक स्तर से ही अनिवार्य विषय के रूप में केन्द्र सरकार व विभिन्न राज्य सरकारें लागू कर दें तो निश्चित ही इसके अत्यन्त सकारात्मक परिणाम देखने को मिलेंगे और विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास करने में सक्षम हो सकेंगे, जिससे व्यक्ति, परिवार, समाज तथा राष्ट्र का चहुंमुखी विकास होगा।

## संदर्भ

1. तत्त्वार्थसूत्र 1/11
2. महाप्रज्ञ दर्शन, पृ. 207
3. वही, पृ. 208
4. आवश्यकसूत्र, दर्शन सम्यक्त का पाठ
5. उत्तराध्ययन अध्ययन–1/9
6. जीवन विज्ञान : शिक्षा का आयाम, पृ. 36
7. दसवैकालिक सूत्र 1/1
8. उत्तराध्ययन, 16/10
9. मुक्तभोग की समस्या व ब्रह्मचर्य, पृ. 13
10. नैतिकता, चरित्र व अणुव्रत, पृ. 31
11. वही, पृ. 33
12. जीवन विज्ञान : शिक्षा का नया आयाम, पृ. 6, 7

## संदर्भ ग्रंथ

1. आचार्य महाप्रज्ञ (1996), 'जीवन विज्ञान : शिक्षा का नया आयाम', लाडनूं, तुलसी अध्यात्म नीडम् प्रकाशन।
2. आचार्य महाप्रज्ञ (1997), 'मुक्तभोग की समस्या और ब्रह्मचर्य', चूरू, आदर्श साहित्य संघ प्रकाशन।
3. आचार्य महाप्रज्ञ (2014), 'नैतिकता, चरित्र व अणुव्रत', लाडनूं, जैन विश्व भारती प्रकाशन।
4. आचार्य महाप्रज्ञ (2005), 'कैसे हो सकता है शुभ भविष्य का निर्माण?', लाडनूं, जैन विश्व भारती प्रकाशन।